

अक्षत का अक्षत-संबल ले, अक्षत-साम्राज्य लिया तुमने।  
 अक्षत-विज्ञान दिया जग को, अक्षत-ब्रह्माण्ड किया तुमने॥  
 मैं केवल अक्षत-अभिलाषी, अक्षत अत एव चरण लाया।  
 निर्वाण-शिला के संगम-सा, धवलाक्षत मेरे मन भाया॥  
 ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।  
 तुम सुरभित ज्ञान-सुमन हो प्रभु, नहीं राग-द्वेष दुर्गन्ध कहीं।  
 सर्वांग सुकोमल चिन्मय तन, जग से कुछ भी सम्बन्ध नहीं॥  
 निज अंतर्वास सुवासित हो, शून्यान्तर पर की माया से।  
 चैतन्य-विपिन के चितरंजन, हो दूर जगत की छाया से॥  
 सुमनों से मन को राह मिली, प्रभु कल्पबेलि से यह लाया।  
 इनको पा चहक उठा मन-खग, भर चोंच चरण में ले लाया॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।  
 आनंद-रसामृत के द्रह हो, नीरस जड़ता का दान नहीं।  
 तुम मुक्त-क्षुधा के वेदन से, षट्स का नाम-निशान नहीं॥  
 विध-विध व्यंजन के विग्रह से, प्रभु भूख न शांत हुई मेरी।  
 आनंद-सुधारस-निर्झर तुम, अतएव शरण ली प्रभु तेरी॥  
 चिर-तृप्ति-प्रदायी व्यंजन से, हों दूर क्षुधा के अंजन ये।  
 क्षुत्पीड़ा कैसे रह लेगी? जब पाये नाथ निरंजन-से॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।  
 चिन्मय-विज्ञान-भवन अधिपति, तुम लोकालोक-प्रकाशक हो।  
 कैवल्य किरण से ज्योतिष प्रभु! तुम महामोहतम नाशक हो॥  
 तुम हो प्रकाश के पुंज नाथ! आवरणों की परछाँह नहीं।  
 प्रतिबिंबित पूरी ज्ञेयावलि, पर चिन्मयता को आँच नहीं॥  
 ले आया दीपक चरणों में, रे! अन्तर आलोकित कर दो।  
 प्रभु! तेरे मेरे अन्तर को, अविलंब निरन्तर से भर दो॥

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।